

तदासौ धर्मघोषाख्यो मुनीन्द्रो धर्मतत्त्ववित्। समाधानं समासाद्य शुक्लध्यानेन धीरधीः ॥११॥
 केवलज्ञानमुत्पाद्य सुरासुरसमर्चितः। मुक्तिं संप्राप्तवान्स्वामी सोस्माकं सत्सुखं क्रियात् ॥१२॥
 स श्रीकेवललोचनोतिचतुरो भव्यौघसम्बोधको
 लोकालोकविलोकनैकनिपुणो देवेन्द्रवृन्द्रार्चितः।
 मिथ्यामोहमहान्धकारतरणिश्चिन्तामणिः प्राणिनां
 कुर्यान्मे भवतां च निर्मलसुखं श्रीधर्मघोषो जिनः ॥१३॥
 इति कथाकोशे धर्मघोषमुनेराख्यानं समाप्तम्।

६४. श्रीदत्तस्याख्यानम्

केवलज्ञानसल्लक्ष्मीनायकं श्रीजिनेश्वरम्। नत्वा देवकृते कष्टे वक्ष्ये श्रीदत्तवृत्तकम् ॥१॥
 इलावर्द्धनसत्पूर्या राजाभूज्जितशत्रुवाक्। इला राज्ञी तयोः पुत्रः श्रीदत्तः संबभूव च ॥२॥
 अयोध्याभूपतेरंशुमतः पुत्रीं स्वयंवरे। सुधीरंशुमतीं पूतां श्रीदत्तः परिणीतवान् ॥३॥
 अंशुमत्या सहैकस्तु समायातः शुकस्तदा। स पक्षी तु तयोर्दृष्टे स्वगेहे रममाणयोः ॥४॥
 श्रीदत्तस्य जये रेखामेकामंशुमतीजये। द्वे रेखे संददात्येव पक्षिणश्चापि वञ्चकाः ॥५॥

प्राप्त हुई। इसके बाद शुक्लध्यान द्वारा घातिया कर्मों का नाश कर उन्होंने केवलज्ञान प्राप्त किया। स्वर्ग के देव उनकी पूजा करने को आए। अनेक भव्य-जनों को आत्म-हित के रास्ते पर लगा कर अन्त में उन्होंने निर्वाण लाभ किया ॥२-१२॥

वे धर्मघोष मुनिराज आपको तथा मुझे भी सुखी करें, जो पदार्थों की सूक्ष्म स्थिति देखने के लिए केवलज्ञानरूपी नेत्र के धारक हैं, भव्य जनों को हितमार्ग में लगाने वाले हैं, लोक तथा अलोक के जानने वाले हैं, देवों द्वारा पूजित हैं और भव्य-जनों के मिथ्यात्व, मोहरूपी गाढ़े अन्धकार को नाश करने के लिए सूर्य हैं ॥१३॥

६४. श्रीदत्त मुनि की कथा

केवलज्ञानरूपी सर्वोच्च लक्ष्मी के जो स्वामी हैं, ऐसे जिनेन्द्र भगवान् को नमस्कार कर श्रीदत्त मुनि की कथा लिखी जाती हैं, जिन्होंने देवों द्वारा दिये हुए कष्ट को बड़ी शान्ति से सहा ॥१॥

श्रीदत्त इलावर्द्धनपुरी के राजा जितशत्रु की रानी इला के पुत्र थे। अयोध्या के राजा अंशुमान की राजकुमारी अंशुमती से इनका ब्याह हुआ था। अंशुमती ने एक तोते को पाल रखा था। जब ये पति-पत्नी विनोद के लिए चौपड़ वगैरह खेलते तब तोता कौन कितनी बार जीता, इसके लिए अपने पैर के नख से रेखा खींच दिया करता था। पर इसमें यह दुष्टता थी कि जब श्रीदत्त जीतता तब तो यह एक ही रेखा खींचता और जब अपनी मालकिन की जीत होती तब दो रेखाएँ खींच दिया करता था। आश्चर्य है कि पक्षी भी ठगाई कर सकते हैं। श्रीदत्त तोते की इस चालाकी को कई बार तो सहन कर

श्रीदत्तेन तदा रुष्टा ग्रीवायां चम्पितः शुकः। मृत्वा व्यन्तरदेवोभून्महाकष्टेन दुष्टधीः ॥६॥
 श्रीदत्तश्चैकदा सोपि स्वप्रासादोपरि स्थितः। मेघस्य पटलं नष्टं समालोक्य विरक्तवान् ॥७॥
 अहो संसारके सर्वं वस्तु विद्युल्लतोपमम्। भोगा भुजंगभोगाभाः कायो मायोपमो मली ॥८॥
 तत्र मूढाः प्रकुर्वन्ति प्रीतिं संसारकादिषु। हा कष्टं किमतोन्यच्च मूढत्वेन समं भुवि ॥९॥
 इत्यादिकं विचार्योच्चैः स्वचित्ते संसृतेः स्थितिम्। दीक्षामादाय जैनेन्द्रिं स्वर्गमोक्षप्रदायिनीम् ॥१०॥
 एकाकी विहरन्धीमान्भव्यसंघान्प्रबोधयन्। निजं पुरं समागत्य शीतकाले बहिः स्थितः ॥११॥
 कायोत्सर्गं स्थितं वीक्ष्य तदा तं मुनिसत्तमम्। शुकव्यन्तरदेवोऽसौ पूर्ववैरेण पापधीः ॥१२॥
 घोरवातमहाशीततोयसंसेवनादिभिः। पीडयामास दुष्टात्मा किं कुकार्यमतः परम् ॥१३॥
 श्रीदत्तश्च मुनीन्द्रोऽसौ शत्रुमित्रसमाशयः। महासमाधिना स्वामी सोढ्वाशेषपरीषहम् ॥१४॥
 शुक्लध्यानप्रभावेन मेरुवन्निश्चलस्तराम्। केवलज्ञानमुत्पाद्य संप्राप्तो मोक्षमक्षयम् ॥१५॥

गया। पर आखिर उसे तोते पर बहुत गुस्सा आया। सो उसने तोते की गरदन पकड़ कर मरोड़ दी। तोता उसी दम मर गया। बड़े कष्ट के साथ मरकर वह व्यन्तरदेव हुआ ॥२-६॥

इधर साँझ को एक दिन श्रीदत्त अपने महल पर बैठा हुआ प्रकृति की सुन्दरता को देख रहा था। इतने में एक बादल का बड़ा भारी टुकड़ा उसकी आँखों के सामने से गुजरा। वह थोड़ी दूर न गया होगा कि देखते देखते छिन्न-भिन्न हो गया। उसकी इस क्षण नश्वरता का श्रीदत्त के चित्त पर बहुत असर पड़ा। संसार की सब वस्तुएँ उसे बिजली की तरह नाशवान् दिखाई पड़ने लगीं। सर्प के समान भयंकर विषय-भोगों से उसे डर लगने लगा। शरीर जिससे कि वह बहुत प्यार करता था सर्व अपवित्रता का स्थान जान पड़ने लगा। उसे ज्ञान हुआ कि ऐसे दुःखमय और देखते-देखते नष्ट होने वाले संसार के साथ जो प्रेम करते हैं, माया-ममता बढ़ाते हैं, वे बड़े बे समझ हैं। वह अपने लिए भी बहुत पछताया कि हाय! मैं कितना मूर्ख हूँ जो अब तक अपने हित को न शोध सका। मतलब यह है कि संसार की दशा से उसे बड़ा वैराग्य हुआ और अन्त में वह सुख के कारण जिनदीक्षा ले ही गया ॥७-१०॥

इसके बाद श्रीदत्त मुनि ने बहुत से देशों और नगरों में भ्रमण कर अनेक भव्य-जनों को सम्बोधा, उन्हें आत्महित की ओर लगाया। घूमते-फिरते वे एक बार अपने शहर की ओर आ गए। समय जाड़े का था। एक दिन श्रीदत्त मुनि शहर के बाहर कायोत्सर्ग ध्यान कर रहे थे, उन्हें ध्यान में खड़ा देख उस तोते के जीव को, जिसे श्रीदत्त ने गर्दन मरोड़ मार डाला था और जो मरकर व्यन्तर हुआ था, अपने बैरी पर बड़ा क्रोध आया। उस बैर का बदला लेने के अभिप्राय से उसने मुनि पर बड़ा उपद्रव किया। एक तो वैसे ही जाड़े का समय, उस पर इसने बड़ी जोर की ठंडी-ठार हवा चलाई, पानी बरसाया, ओले गिराये। मतलब यह कि उसने अपना बदला चुकाने में मुनि को बहुत कष्ट दिया। श्रीदत्त मुनिराज ने इन सब कष्टों को बड़ी शान्ति और धीरज के साथ सहा। व्यन्तर उनका पूरा दुश्मन था, पर तब भी इन्होंने उस पर रंच मात्र भी क्रोध न किया। वे वैरी और हितैषी को सदा समान भाव से देखते थे। अन्त में शुक्लध्यान द्वारा केवलज्ञान प्राप्त कर वे कभी नाश न होने वाले मोक्ष स्थान को चले गए ॥११-१५॥

स श्रीमज्जितशत्रुराजतनुजः श्रीदत्तनामा मुनि-
 भूत्वा देवकृतप्रकष्टमतुलं सोढ्वा शुभध्यानतः।
 हत्वाशेषनिबन्धनानि नितरां प्राप्तः श्रियं शाश्वतीं
 स श्रीकेवललोचनो जिनपतिर्दद्यात्स्वभक्तिं मम ॥१६॥

इति कथाकोशे श्रीदत्तमुनेराख्यानं समाप्तम्।

६५. श्रीवृषभसेनस्याख्यानम्

प्रोल्लसत्परमानन्द-जगद्वन्द्यं जिनेश्वरम्। नत्वा वृषभसेनस्य चरित्रं रचयाम्यहम् ॥१॥
 उज्जयिन्यां महाराजः प्रद्योताख्यो गुणोज्ज्वलः। मदोन्मत्तगजारूढो गजार्थमटवीं गतः ॥२॥
 नीतो मत्तगजेनासौ सुदूरं भूरिदुःखतः। वृक्षशाखां नृपः प्रोचैरवलम्ब्यावतीर्य च ॥३॥
 एकाकी तु समागच्छन्खेटग्रामे मनोहरे। स्थितः कूपतटे यावज्जिनपालस्य धीमतः ॥४॥
 ग्रामकूटस्य तोयार्थं जिनदत्तागता सुता। तदा तेन नरेन्द्रेण जलं पातुं प्रयाचिता ॥५॥
 महान्तं पुरुषं ज्ञात्वा दत्त्वा तस्मै जलं मुदा। सा ततो गृहमागत्य तां वार्त्तां स्वपितुर्जगौ ॥६॥
 ततोसौ जिनपालेन समागत्य प्रभक्तितः। नीत्वा गृहं सुखस्नानं भोजनं कारितो नृपः ॥७॥

जितशत्रु राजा के पुत्र श्रीदत्त मुनि देवकृत कष्टों को बड़ी शान्ति के साथ सहकर अन्त में शुक्लध्यान द्वारा सब कर्मों का नाश कर मोक्ष गए। वे केवलज्ञानी भगवान् मुझे अपनी भक्ति प्रदान करें, जिससे मुझे भी शान्ति प्राप्त हो ॥१६॥

६५. वृषभसेन की कथा

जिन्हें सारा संसार बड़े आनन्द के साथ सिर झुकाता है, उन जिन भगवान् को नमस्कार कर वृषभसेन का चरित लिखा जाता है ॥१॥

उज्जैन के राजा प्रद्योत एक दिन उन्मत्त हाथी पर बैठकर हाथी पकड़ने के लिए स्वयं किसी एक घने जंगल में गए। हाथी इन्हें बड़ी दूर ले भागा और आगे-आगे भागता ही चला जाता था। इन्होंने उसके ठहराने की बड़ी कोशिश की, पर उसमें वे सफल नहीं हुए। भाग्य से हाथी एक झाड़ के नीचे होकर जा रहा था कि इन्हें सुबुद्धि सूझ गई वे उसकी टहनी पकड़ कर लटक गए और फिर धीरे-धीरे नीचे उतर आए। यहाँ से चलकर वे खेट नाम के एक छोटे से पर बहुत सुन्दर गाँव के पास पहुँचे। एक पनघट पर जाकर ये बैठ गये। उन्हें बड़ी प्यास लग रही थी। इन्होंने उसी समय पनघट पर पानी भरने को आई हुई जिनपाल की लड़की जिनदत्ता से जल पिला देने के लिए कहा। उसने इनके चेहरे के रंग-ढंग से इन्हें कोई बड़ा आदमी समझ जल पिला दिया। बाद में अपने घर पर आकर उसने प्रद्योत का हाल अपने पिता से कहा। सुनकर जिनपाल दौड़ा हुआ आकर उन्हें अपने घर लिवा लाया और बड़े आदर सत्कार के साथ उसने उन्हें स्नान-भोजन कराया। प्रद्योत उसकी इस मेहमानी से बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने जिनपाल को अपना सब परिचय दिया। जिनपाल ने ऐसे महान् अतिथि द्वारा अपना घर